:- अध्याय पाँच --

:-- उपसंहार --::

सन १९५० से १९७० तक के दो दशकों के अन्तराल के हिन्दी साहित्य को मोहन राकेश ने अपनी अनमोल कृतियों व्दारा समृध्द बनाया । राकेश ने अपने नाटकों में नर नारी के सम्बन्धों में तेजी से बढ रहे अलगाव को सूक्ष्मता से चित्रित करने की कोशिश की हैं । राकेश के नाटकों के नारी पात्र आम लोगों के मनो जीवन से उभरे हुए और उन्हीं का अविभाज्य अंग बने हुए दिखाई देते हैं । जीवन यापन करते समय मानसिक उलझनों, अबूझ पहेलियों, भावनाओं तथा कटु यथार्थ के चक्कर में उलझी नारी के जीवन की गुत्थियों को सुलझाने की कोशिश राकेश ने की हैं ।

राकेश ने नारी को प्रगतिशील दृष्टिकोण के दायरे में परखा हैं । स्त्रियों के बारे में राकेश का जो अपेक्षा भंग हुआ, शायद उसकी बडुवाहट उनके नाटकों के नारी-पात्रों पर आरोपित दिखाई देती हैं । फिर भी मेधावी शक्ति के आभिजात्य कलाकार में छिपा राकेश इतना सीमित नहीं था । राकेश ने अपने नाटकों में कहीं भी जानबूझकर नारी की उपेक्षा नहीं की हैं । राकेश जीवन में प्रेरणा देनेवाले स्नेह की खोज में थे, शायद इसीलिए वे नित्य नई नारी से जुडते चले गए थे । कहा गया हैं, राकेश हर स्त्री में अपनी माँ को देखने के आदि थे, हर किस्म की पवित्रता, शुचिता वे स्त्री में चाहते थे ।

राकेश का नारी विषायक दृष्टिकोण युग के अनुकूल नवीनता का परिचायक हैं । राकेश के नाटकों के नारी पात्रों का मानसिक संघर्ष अनेक समस्याओं को प्रकट करता हैं । राकेश नवीनता के प्रति रुचि रखते हैं, अवश्य, फिर भी नारी को नारीत्व के परम्परागत आदर्शों से पूर्णत: विमुख नहीं

दिखाना चाहते । वर्तमान युग में समानता के कितने भी नारे लगाए गए, तो भी नारी का कार्यक्षेत्र पुरुषा से सर्वथा भिन्न है । राकेश वैज्ञानिक युग में भी नारी को आधुनिकता की होड में अपने नारीत्व से परे नहीं हट जाना चाहते । राकेश के मन में सूक्ष्म रूप से यही भावना रही है, कि नारी स्वतंत्रता और समानता का उपभोग ले, परंतु पुरुषा को चुनौती न दे । उन्होंने जीवन में जो चाहा ,वही भावना उनके साहित्य में भी रही है । नर नारी एक-दूसरे के प्रतियोगी बन कर न रहे, अपितु एक दूसरे के पूरक बन कर रहे ।

राकेश ने नारी चित्रण करते समय भारतीय संस्कृति के गरिमा के छोर को नहीं छोडा है, परंतु प्रेमचंद के साहित्य में चित्रित आदर्श को भी उन्होंने स्वीकृत नहीं किया है । राकेश की नारी अपने `स्व` के प्रति जागरूक दिखाई देती है । नारी का स्तर परम्परागत हीनता से ऊपर उठा दिखाई देता है । राकेश ने अपने नारी पात्रों के जरिए नारी की शिक्षा अशिक्षा का असर, बुरी बातों में फँसी नारी को समाज द्वारा अपनाना,वेश्यावृत्ति की जड, अनमेल विवाह की दिक्कतें आदि समस्याओं को सूक्ष्मता से चित्रित किया है । यथार्थवादी पृष्ठभूमि में लेखक का सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक पर्यवेक्षाण द्रष्टव्य है । संवेदन-शीलता के धरातल पर नारी का मन अपनी पूरी गहराई के साथ चित्रित हुआ है । नारी के अन्तस् में झाँक कर चेतन अवचेतन तक की टोह ली गई है । राकेश ने अपने नाटकों में नारी के गुणावगुण ,सुख दुःख,आशा-निराशा,भावनाओं के चढाव उतार नवार्जित स्वतंत्रता आदि सभी बातों का उद्घाटन बडी संवेदनशीलता के साथ किया है । राकेश के नारी-पात्रों में बाह्य संघर्ष की अपेक्षा आन्तरिक संघर्ष अधिक उभरा हुआ है ।

राकेश का नारी के प्रति विकासशील दृष्टिकोण रहा है, इसी कारण उनके नाटकों में प्रारंभ में नारी का जो रूप दिखाई देता है,वह अन्त में नहीं दिखाई देता । `आषाढ का एक दिन` की प्रेम के लिए समर्पित `मल्लिका` की आस्था `पैर तले की जमीन` की `सलमा` में नहीं दिखाई देती । `मल्लिका` में

चिरन्तन काल से चली आई श्रध्दा का भाव है । `लहरों के राजहंस` की `सुंदरी` में समानता का मान अवश्य है, परंतु उसमें कुछ स्वाभिमान का भारीपन महसूस होता है । `आधे-अधूरे` की `सावित्री` स्वावलंबी है, परंतु पुरुष के स्वयंपूर्ण होने की कामना करती है । वह पुरुष को किसी दूसरे के आश्रित रहने से रोकती है । एक तरह से यह नारी के बौध्दिक विकास की प्रक्रिया ही कही जाएगी । वर्तमान युग में बौध्दिकता ने नैतिकता को चुनौती दी है । नारी जीवन की श्रध्दा और आस्था अब सहयोग और समझौते में बदल गई है । राकेश चाहते हैं, कि यह साझेदारी उचित सहयोग से बनी रहे । प्रगतिशील समाज की बुरी बातें नारी को दिन-प्रति-दिन घेर रही हैं और उसी में खुद का अस्तित्व मिटा देना या अस्तित्व बनाए रखकर आगे बढना यह विचारशीला नारी के हाथ में है ।

भारतीय परम्परा के अनुसार आध्यात्मिक धरातल पर आधारित विवाह की अपेक्षा राकेश ने विवाह में दो दिलों का एक दूसरे को अच्छी तरह पहचानना श्रेष्ठ माना है । यद्यपि राकेश ने दो बार वैदिक पध्दति से विवाह किया था, परंतु वे अन्त तक निभ न सके । राकेश ने तीसरा विवाह परम्परागत ढंग से नहीं किया, परंतु राकेश और अनीता दोनों एक दूसरे में पक्के घुल मिल गए । दोनों को भी सच्चा सुख और सहयोग मिला । राकेश ने नारी की प्रगतिशील चेतना का कहीं भी विरोध नहीं किया है । परंतु विभिन्न बातों को परख कर उसे सहे दिल से चाहा है । इससे स्पष्ट होता है, कि दाम्पत्य सुख की मूल भित्ति आपसी सूझ-बूझ और पारस्परिक निर्भरता पर टिकी हुई है ।

राकेश ने अपने नाटकों के जरिए सामाजिक यथार्थ का प्रतिनिधित्व करनेवाले नर-नारी के विभिन्न रूपों और मानसिक व्यथाओं को बडे ही सूक्ष्मता के साथ उजागर किया है । नारी के शील वैचित्र्य में उन्होंने उच्चादर्शों से प्रेरित एवं नैतिक रूप में पूर्णत: अध:पतित नारी पात्र दिखाए हैं । राकेश ने अपने नारी चरित्रों के जरिए नारी जीवन से सम्बन्धित यह कटु सत्य बताने का प्रयास किया है, कि नैतिक बन्धन तोडकर नारी अपने जीवन में कभी भी सफल नहीं हो

सकती । राकेश ने वासनात्मक प्रेम का चित्रण यथार्थ के रूप में किया है, लेकिन उसका समर्थन नहीं किया है । कहीं कहीं नैतिकता की सीमाओं को तोड कर भी नारी मन के सत्य की ऊँचाई को आँका है । राकेश की नारी संघर्ष या संकटों से हार कर जिंदगी से पलायन या आत्महत्या का मार्ग कभी नहीं अपनाती । राकेश के नारी-पात्र मनुष्योचित व्यवहार करते हैं । आस-पास का वातावरण और घटित घटनाओं के घात-प्रतिघात के अनुसार ही उनका पतन या उत्थान होता है । इसी स्वाभाविकता के कारण राकेश के नारी-पात्र विश्वसनीय लगते हैं, परंतु 'मल्लिका' और 'सवित्री' जैसे कुछ नारी-पात्र विवादास्पद एवं वर्जित हुए हैं ।

राकेश के नारी-पात्र 'विश्व-बन्धुत्व', 'राष्ट्र प्रेम' आदि बातों से अलिप्त दिखाई देते हैं, वे अपनी ही उलझनों, तनाओं और अपूर्णताओं में उलझे दिखाई देते हैं । इस प्रकार राकेश ने अपने नाटकों के माध्यम से नारी संबंधी जन-जीवन की परिवर्तनशील मान्यताएँ, परिवर्तित नैतिक मानदण्ड, नारी मन की कुण्ठाएँ, विडम्बनाएँ, मनोवैज्ञानिक कुहासे, विकृतियाँ, घुटन, विषण्णता आदि बातों का सशक्त रूप से और वैविध्यपूर्ण दृष्टिकोण से पर्यवेक्षण किया है ।

निष्कर्ष --

अब से अब तक के विवेचन के आधार पर यह कहा जा सकता है, कि राकेश के नारी-पात्र पूर्ण रूप से भारतीय हैं । उनमें वैयक्तिकता के साथ साथ मनोवैज्ञानिकता के आधार पर विकसित मानवीय संबंधों का वैविध्य है । स्त्री-पुरुष में चिरंतन रूप से स्थित परस्पराकर्षण को मनोवैज्ञानिक ढंग से प्रस्तुत किया है । राकेश के नारी-पात्रों में नए पुराने मूल्यों की टकराहट, नैतिक मूल्यों का अवमूल्यन, धन का अतिरिक्त महत्व, आधुनिक यांत्रिक युग का संत्रास, अजनबीपन

आदि बातों का नए युगबोध के रूप में दर्शन होता है । नारी पर अमल करनेवाली अर्थ और काम मूलक कुण्ठा का वर्णन बड़े ही सूक्ष्मता से किया है । नारी में पुरानी पीढ़ी की कुढन, मध्य पीढ़ी की सहिष्णुता और नई पीढ़ी का विद्रोह भी है । नारी-पात्र अस्तित्ववादी चेतना में जीते हैं, अनेक परिवर्तित नामहीन सम्बन्धों को अपनाते हैं, परंतु आधुनिकता में भी आस्था को बनाए रखते हैं । राकेश ने अपने नाटकों में वर्तमान सभ्यता के संदर्भ में नारी के मन में उठनेवाले अन्तर्द्वंद्वों, काम लिप्साओं और समाज द्वारा निर्धारित नैतिक मूल्यों के अत:संघर्ष को चित्रित किया है । राकेश के नारी-पात्र अपने ही तनाओं, उलझनों, अपूर्णताओं में उलझे दिखाई देते हैं, अत: उनका सामाजिक पक्ष कमजोर है । नारी-पात्र मुक्ति के लिए संघर्षरत हैं, परंतु मुक्ति इतनी आसान नहीं है। राकेश नर नारी सम्बन्धों को न्याय, समानता, उदात्तता और व्यावहारिकता के धरातल पर देखना चाहते थे । इसी में उनका और उनके नाट्य साहित्य का महत्व निहित है ।

••

- आधार ग्रन्थ --

- आधार ग्रंथ --

१. अण्डे के छिलके अन्य एकांकी तथा बीज-नाटक — मोहन राकेश, प्र.स. १९८३ पृ. ७०
राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली ।

२. आधे - अधूरे — मोहन राकेश, प्र.स. १९८१ पृ. ५६
राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली ।

३. आषाढ का एक दिन — मोहन राकेश, प्र.स. १९५८ पृ. २८०
राजपाल एण्ड सन्स, कश्मीरी गेट
दिल्ली ।

४. पैर तले की जमीन — मोहन राकेश, प्र.स. १९८२ पृ. ६२
राजपाल एण्ड सन्स, कश्मीरी गेट
दिल्ली ।

५. रात बीतने तक तथा अन्य ध्वनि - नाटक — मोहन राकेश , प्र.स. १९७९ पृ. ८८
राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली ।

६. लहरों के राजहंस — मोहन राकेश, प्र.स. १९८३
राजकमल प्रकाशन, पृ. ३१
नई दिल्ली ।